P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारतीय समाज में नारीः नारी के विभिन्न रूप और गांधी की नारी की समीक्षा

रजनी तसीवाल
सह आचार्य
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
टोंक, राजस्थान, भारत

सारांश

नारी का सम्मान करना एवं उसके हितों की रक्षा करना प्राचीनकाल से ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति का मूल रहा है। प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज में नारी को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। स्त्रियाँ को समाज में ईश्वरीय आर्शीवाद स्वरूप माना जाता है। स्त्रियाँ ने सदैव ही अपनी उपस्थिति से समाज को गौरवान्वित व लाभान्वित किया है।

यद्यपि भारत एक पुरूष प्रधान देश हैं। पुरूष प्रधान इस देश में महिलाओं ने अपनी विशेष योग्यता से सदैव ही उज्जवलतम् पृष्ठों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है। स्त्रियाँ की एक स्वाभाविक विशेषता होती है कि यदि उन्हें प्रेम, सम्मान व सुरक्षा प्रदान की जाये तो वे अपने कर्तव्यों के निवर्हन के लिए व समाज परिवार के प्रति अपने दायित्वों को पूर्ण करने के लिए अपने प्राण भी न्यौछावर कर सकती है।

इस प्रकार यदि समाज में नारी की भूमिका पर विचार किया जाये तो हम पायेगें कि नारी सदैव ही भिन्न–भिन्न रूपों में अपनी भूमिका का निर्वहन करती है। परिवार को एक ईकाई के रूप में जोड़कर रखने में नारी भिन्न–भिन्न रूप सदैव निभाती है। जन्म से लेकर मृत्यु तक स्त्री अनेक भूमिकाओं का निर्वहन करती है। वह पुत्री, बहन, पत्नी, माता जैसी अनेको भूमिकाओं को निभाती हैं इन सभी महत्वपूर्ण भूमिकाओं में स्त्री अपने निजी स्वार्थों को दर–किनार करते हुए अन्य सभी को प्राथमिकता देती है प्राचीन काल में स्त्रियाँ की स्थिति समाज में उच्च सम्मान प्राप्त थी। महिलाओं को पुरूषों के समान समाज में बराबरी का स्थान प्राप्त था। शिक्षा के क्षैत्र में, धार्मिक कर्मकांडो के क्षेत्र में, आर्थिक सम्पन्नता इत्यादि सभी क्षेत्रों में उसकी स्थिति उच्च कोटि की थी। उत्तरवैदिक काल में स्त्रियाँ के अधिकारों के क्षेत्र में कटौती की गई। शिक्षा धर्म–सामाजिक क्रियाकलाप आदि क्षेत्रों में उसकी स्थिति में गिरावट आई। महाजनपद–बुद्धकाल तक आते–आते निरन्तर महिलाओं के सम्मान के स्तर में कमी आती गई। पूर्व मध्यकाल मे मुस्लिम आक्रान्ताओं के भारत में प्रवेश के साथ ही समाज मे प्रत्येक क्षेत्र में अनेक परिवर्तन आये।

सती प्रथा, कन्या वध, दहेज प्रथा, बहुपत्नी प्रथा में वृद्धि तथा पुनर्विवाह पर पाबंदी आदि कुप्रथाओं के कारण स्त्रियाँ के सम्मान में कमी आई। किन्तु सब इस तथ्य को जानते है कि सन् 1947 में भारत के ब्रिटिश आधिपत्य से मुक्त होने में स्त्रियाँ की सक्रिय भूमिका रही है। स्त्री की इस भूमिका से गाँधीजी सबसे अधिक परिचित थे। महात्मा गाँधीजी ने स्त्री को एक नई पहचान में देखा था। वह पर्यावरण की संरक्षिका, परिवार की मुखिया तो थी ही, वही नारी स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा राजनीति की सर्वज्ञाता और शक्ति का प्रतीक भी बन गई थी। गांधीजी की नारी क्या वास्तव में आज अस्तित्व में है क्या समाज उसे पुरूष के समान स्वीकार कर पाया है? यहीं सोचनीय प्रश्न है।

मुख्य शब्द : अस्थि पंजर, उदरपूर्ति, ऋचाओं कृपण, इहलोक।

प्रस्तावना

नारी का सम्मान करना एवं उसके हितों की रक्षा करना प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति का मूल रहा है। प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में नारी को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। भारतीय समाज में स्त्रियाँ को ईश्वरीय आर्शीवाद स्वरूप माना जाता रहा है। स्त्रियाँ ने सदैव ही अपनी उपस्थिति से समाज को गौरवान्वित व लाभान्वित किया है।

''सन्तुष्टों भार्यया भर्ता भर्त्र भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुल नित्यं कल्याण तत्र वै ध्रुवम्।

जिस कुल में भार्या से भर्ता और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती है उसी कुल में सब सौभाग्य और एश्वर्य निवास करते है। जहां कलह होता है वहां दुर्भाग्य और दारिद्रय स्थिर होता है।

यद्यपि भारत एक पुरूष प्रधान देश है। पुरूष प्रधान इस देश में महिलाओं ने अपनी विशेष योग्यता से सदैव ही उज्जवलम् पृष्ठों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है। समस्त विश्व की स्त्रियोँ की एक स्वभाविक विशेषता होती है कि उन्हें प्रेम, सम्मान व सुरक्षा प्रदान की जाये तो वे अपने कर्तव्यों के निर्वहन के लिए समाज व परिवार के प्रति अपने दायित्वों को पूर्ण करने के लिए अपने प्राण भी न्यौछावर कर सकती है।

वर्तमान समय में समाज में हम नारी की भूमिका को देखे तो हम पायेगें कि नारी सदैव ही भिन्न–भिन्न रूपों में अपनी भूमिका का निर्वहन करती है। परिवार को एक ईकाई के रूप में जोड़कर रखने में नारी भिन्न–भिन्न रूप सदैव निभाती है। जन्म से लेकर मृत्यु तक स्त्री अनेक भूमिकाओं का निर्वहन करती है वह पुत्री, बहन, पत्नी, माता जैसी अनेकों भूमिकाओं को निभाती है।

अध्ययन का उद्देश्य

भारत में आदिकाल से ही स्त्री तथा पुरूष को एक समान अधिकार प्रदान किये गये है। भारतीय इतिहास (प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक भारत का समस्त अध्ययन) इस बात का साक्षी है कि राजनैतिक निर्णय लेने वाले स्थानों पर भी महिलाओं को बराबरी का स्थान मिला है। वैदिक काल में सभा और समितियों में स्त्री भी विमर्श का हिस्सा होती थी। अनेक स्त्रियोँ जैसे कि लोपामुद्रा, मैत्रैयी ने वेदों की ऋचाओं का सृजन किया था।

वैदिक काल के बाद जैनधर्म व बौद्धधर्म ने भी स्त्रियोँ को समान महत्व प्रदान किया गया। गुप्तकाल में भी उसे शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। संगम युग, गुप्तकाल, उत्तरगुप्तकाल व चोलकालीन सभ्यता के बाद भारत में मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना हुई तो नारी की स्वतंत्रता पर अनेकों नियंत्रण लग गये।

1857 की क्रांति का प्रारम्भ हुआ। रानी लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगना स्त्री ने देश का गौरव बढ़ाया। 1857 से लेकर 1947 तक के स्वतंत्रता संग्राम में कस्तूरबा गांधी, सरोजनी नायडू आदि स्त्रियोँ ने अपना अमूल्य योगदान प्रदान किया। क्या भारतीय नारी के जीवन में व्याप्त कुरूतियों का अन्त संभव है ?

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने स्त्री शक्ति को कैसे स्वीकार किया है ?

क्या शिक्षित नारी समाज में वास्तव में नयी दुनिया की स्थापना कर सकती है? प्रस्तुत शोध पत्र इसी अध्ययन को लेकर प्रस्तुत है।

प्राचीन भारत और नारी

1. पूर्व पाषाण काल
2. मध्य पाषाण काल
3. नव पाषाण काल
4. सिन्धुघाटी सभ्यता (हड़प्पा सभ्यता)
5. वैदिक सभ्यता
6. महाकाव्य काल
7. मौर्यकालीन समाज
8. मौर्योतर कालीन समाज
9. संगमकालीन समाज
10. गुप्त कालीन समाज

पूर्व पाषाण काल

भारत में पाषाण कालीन सभ्यता का अनुसंधान 1863 ई0 से प्रारम्भ हुआ था। सबसे पहले बूसफूट नामक भू–वैज्ञानिक को मद्रास के निकट पल्लावरम नामक स्थान पर पूर्व पाषाण निर्मित प्रथम औजार मिला था।

सयोगवश भारत वर्ष में पूर्व पाषाण कालीन मनुष्य का कोई भी अस्थिपंजर या भाग उपलब्ध नहीं हो सका है। फिर भी अनुसंधान से प्राप्त उपकरणों तथा विश्व के अन्य प्रदेशों में उपलब्ध मानव–अस्थिपंजरों के आधार पर विद्वानों का मत है कि भारत वर्ष में प्राचीनतम मानव का आर्विभाव सर्वप्रथम पंजाब की सिन्धु और झेलम नदियां के बीच के भू–भाग में हुआ था। चूंकि पूर्व पाषाण कालीन मानव का जीवन नितांत बर्बर था। मानव का जीवन पशुओं से अधिक भिन्न नहीं था। पशुओं की भांति उसे भी जीवन के लिए संघर्ष करना पड़ता था।

उस समय का मनुष्य पूर्णतया प्रकृति जीवी था। कृषि कर्म से अपरिचित वह सहज रूप में उत्पन्न होने वाले फल और कन्द मूल, आखेट में मारे गये पशुओं और सरिताओं तथा झीलों के तटों पर पकड़ी मछलियों से ही अपनी उदरपूर्ति करता था। आदि मानव का जीवन पशुओं के समान था। अतः उनमें सामाजिक रिश्तों की भावना का जन्म नहीं हुआ था।

मध्य पाषाण कालीन

भारत वर्ष में मध्य पाषाण कालीन मनुष्य छोटी–छोटी पहाड़ियों पर रहता था। अधिकांश विद्वानों के अनुसार उस युग का मानव कृषि कर्म तथा पशु पालन से अनभिज्ञ था। उस युग के मानव का प्रमुख उद्यम आखेट था। उस समय का मानव पशु पक्षियों का मांस तथा झीलों और नदियों के तटों पर पकडी गयी मछलियों के अलावा वन से प्राप्त फल, फूल और कन्द मूल से अपना पेट भरता था। मध्य पाषाण काल तक भी स्त्री व पुरूष ''मानव'' थे।

नव पाषाण कालीन

उत्तर पाषाण काल तक आते–आते भारत वर्ष में मनुष्य समुदायों, जातियों और वर्गों में बटने लगा। इस उत्तर पाषाण काल अथवा नव पाषाण काल के निर्माण की प्रारम्भिक अवस्था में स्त्रियोँ की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण रहीं। ऐसा माना जा सकता है कि खेती का बहुत सा काम, गेहूँ पीसने का काम, खाना बनाना, सूत कातना, कपड़ा बुनना तथा बर्तन बनाना आदि अधिकांश कार्यों का दायित्व स्त्रियोँ का ही रहा होगा। अतः नव पाषाण काल के समाज में स्त्रियोँ की स्थिति काफी महत्वपूर्ण बनी रही होगी।

पशुपालन और खेती के व्यवसाय ने मानव को बड़े परिवार में रहने के लिए बाध्य कर दिया क्योकि उपयुक्त दोनो व्यवसायों में अधिक हाथों के श्रम की आवश्यकता थी।

इस समय के पारिवारिक संबंधों के बारे में निश्चित रूप में कुछ कहा नहीं जा सकता। वैसे विद्वानों की मान्यता है कि इस युग में भी मातृसत्तात्मक परिवार

प्रथा का प्रचलन रहा होगा।[1] मातृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था यदि उपस्थित थी तो इसका अर्थ है कि स्त्री का स्थान नव पाषाण युग में सर्वोच्च था।

हड़प्पा सभ्यता और स्त्री

हड़प्पा सभ्यता के कई स्थानों में भारी संख्या में खडी और अर्द्धनग्न नारी की मूतियाँ प्राप्त हुई है। विद्वानों का मत है कि ये मूतियाँ मातृदेवी या प्रकृति देवी की मूतियाँ है। सर जॉन मार्शल के मत में हड़प्पा सभ्यता के देवगणों में मातृदेवी का स्थान सर्वश्रेष्ठ था[2] ऐसे साक्ष्य भी प्राप्त हुए है जिनके आधार पर हम यह स्वीकार कर सकते है कि प्राचीन संसार में मातृदेवीकी पूजा लोकप्रिय थी। मातृदेवी की इस प्रकार की मूतियाँ ईरान, मेसापोटामिया, सीरिया, फिलिस्तीन एशिया माइनर, मिश्र, पश्चिमी देशों में मिली है।

दक्षिण भारत में भी ऐसी मूतियाँ मिली है। नारी की शक्ति रूप में पूजा की जाती थी। किन्तु इस काल के ठोस साक्ष्यों के अभाव में समाज में नारी का स्थान सुनिश्चित करना संभव नहीं है। विद्वानों का अनुमान है कि हड़प्पा सभ्यता के समाज में नारी का आदरपूर्ण स्थान था। वह परिवार की मुखिया एवं पोषिका मानी जाती थी। उसका मुख्य कार्य बच्चों का लालन–पालन एवं अवकाश के समय में घर में सूत कातना था। उस समय की मुद्राओं पर अंकित नारी चित्रों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उस समय में स्त्रियों में पर्दाप्रथा का प्रचलन नहीं था और वे धार्मिक तथा सामाजिक उत्सवों में पुरूषों के साथ समान रूप से सम्मिलित होती थी। अतः उस समय स्त्री की स्थिति सर्वश्रेष्ठ थी।

वैदिक युग

हड़प्पा सभ्यता के अंतिम चरण में अथवा उसके विनाश के बाद भारत में एक अन्य सभ्यता एवं संस्कृति का विकास हुआ, जिसे वैदिक सभ्यता कहा जाता है। वैदिक युग की सभ्यता की जानकारी हमें वैदिक साहित्य से मिलती है। इस सभ्यता एवं संस्कृति के संस्थापकों को ऋग्वेद में आर्य कहा जाता है। आर्य विद्वानों ने जिस साहित्य की रचना की यह ''वैदिक साहित्य'' के नाम से विख्यात है।[3]

वैदिककाल के परिवार में पुरूष की प्रधानता होते हुए भी स्त्रियों को सम्मानित स्थान प्राप्त था। समाज में उनका स्थान सर्वोच्च था। वे पति की अर्द्धांगिनी तथा गृहस्वामिनी मानी जाती थी। पत्नी ही घर है, पत्नी ही गृहस्थी है, पत्नी आनन्द है। जहां–जहां स्त्रियों का सम्मान होता है, वहां देवताओं का निवास होता है। इस बात के कई साक्ष्य हमें प्राप्त है, कि स्त्रियाँ यज्ञ–याजन तथा धार्मिक उत्सवों में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लेती थी। वैदिक काल में पर्दाप्रथा का प्रचलन नहीं था, अर्थात् उस समय का समाज स्त्री को अधिकतम सुरक्षा भी प्रदान करता था। वैदिक काल में कन्याओं की शिक्षा का समुचित प्रबंध था। शिक्षा के समुचित प्रबंधन के कारण ही ऋग्वैदिक काल में घोपा, अपाला–लोपमुद्रा, श्रृद्धा आदि परम विदुषी स्त्रियाँ हुई थी। जिन्होंने वैदिक ऋचाओं की रचना की थी।

उपनिषदों से भी हमें उस समाज व उस समाज में नारी की सुदृढ़ स्थिति की जानकारी प्राप्त होती है। जनक की राजसभा में गार्गी ने याज्ञवलक्य के साथ शास्त्रार्थ किया था। उसी समय में गन्धर्व–गृहीता नामक एक अन्य स्त्री परम विदुषी तथा भाषण कला में अत्यधिक निपुण थी। मैत्रेयी जैसी विदुषी महिला भी उत्तर वैदिक काल की देन थी।

उत्तर वैदिक काल और स्त्रीः– वैदिक काल के समान ही उत्तर वैदिक काल में भी स्त्रियों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। शतपथ ब्राह्मण में उसे पुरूष की ''अर्धांगिनी'' कहा जाता है।[4]

धर्म सूत्रों में तो स्त्रियों के प्रति उदार रूख अपनाया गया है। वशिष्ठ धर्मसूत्र में लिखा है कि चाहे पत्नी दोषी हो, झगड़ालू हो या घर छोड़कर चली गई हो, उसके साथ बलात्कार हुआ हो, उसे त्यागा नहीं जायेगा। सभी धर्मसूत्रों में पत्नी को त्यागने वाले पति के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था की गई है।

आपस्तम्ब सूत्र में लिखा है कि जिस पति ने अन्याय से अपनी पत्नी का परित्याग किया हो, वह गधे का चमड़ा ओढ़कर प्रतिदिन सात गृहों में यह कहते हुए भिक्षा मांगे कि उस पुरूष को भिक्षा प्रदान करों, जिसने अपनी को त्याग दिया है। वस्तुतः यह कठोर दण्ड था।

ऋग्वैदिक काल की भांति उत्तर वैदिक काल में भी माता के पद को बहुत ऊँचा और पवित्र समझा जाता था। वशिष्ठ सूत्र में माता का स्थान उपाध्याय, आचार्य और पिता से श्रेष्ठ माना गया है।

उत्तर वैदिक काल व स्त्री के स्थान में परिवर्तन

वैदिक काल व उत्तर वैदिक काल में स्त्री का स्थान सर्वोपरि था किन्तु परिवर्तन समाज के हर क्षेत्र में होता है। यह परिवर्तन सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक व वैश्विक होता है। कुछ विद्वानों का मानना है कि उत्तर वैदिक काल के अंतिम भाग में स्त्रियों की स्थिति में काफी गिरावट आ गयी थी। इस उत्तर वैदिक काल में पुत्र की तुलना में पुत्री का स्थान निम्न माना जाने लगा था। अथर्ववेद में पुत्री के जन्म पर खिन्नता का उल्लेख मिलता है। ऐतरेय ब्राह्मण में पुत्री के लिए ''कृपण'' शब्द का उल्लेख किया गया है। उत्तर वैदिक काल में रचित साहित्य में कन्याओं के बेचने और दहेज लेने के उल्लेख मिलते है। उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों को राजनीतिक सभाओं में भाग लेने से मना किया जाने लगा था। उत्तर वैदिक काल में परिवारों में किये जाने वाले धार्मिक कार्यों में भी स्त्री के स्थान पर पुरोहित को बुलाया जाने लगा था। उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों पर कई प्रकार के प्रतिबंध लगाये जाने लगे थे।

ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है कि ''एक अच्छी स्त्री वह है जो उत्तर नहीं देती।''

शत्तपथ ब्राह्मण कहता है कि पति के पहले पत्नी को भोजन नहीं करना चाहिए। ऐतरेय ब्राह्मण में तो पुत्री का जन्म दुख का कारण माना गया है।

मैत्रायनी– संहिता में स्त्री को जुआ और शराब की भांति पुरूष का दोष माना गया है। अतः उत्तर वैदिक में स्त्रियों की स्थिति में कुछ गिरावट आना प्रारम्भ हो गयी थी।

1. महाकाव्य काल और स्त्री

भारतीय इतिहास में उत्तर वैदिक काल के बाद का सूत्र ''सूत्रकाल'' और उसके बाद का समय ''महाकाव्य काल'' के नाम से जाना जाता है। इस काल की जानकारी हमें महाभारत और रामायण से प्राप्त होती है। महाकाव्य कालीन भारतीय समाज में पुत्री की अपेक्षा पुत्र का अधिक महत्व था। क्योकि पुत्र के द्वारा ही व्यक्ति अपने इहलोक और परलोक दोनो को सुधार सकता था। ऐसा भी प्रतीत होता है कि इस महाकाव्य कालीन युग में पुत्री का जन्म आपत्ति का कारण माना जाता था। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि पुत्री के लालन–पालन की उपेक्षा की जाती थी। स्वयं भीष्म पितामाह पुत्री को पुत्र के समान मानने वालों में से एक थे। महाकाव्य काल में विवाह व्यस्क अवस्था में होते थे। एक स्त्री को अपने लिये योग्य व बहादुर वर चुनने का अधिकार था। सीता, उर्मिला, कुन्ती, द्रोपदी, सुभद्रा, देवयानी, शकुन्तला, सत्यवती, दमयन्ती सभी का विवाह युवास्था में ही हुआ था।

यह सत्य है कि महाकाव्य काल में सामान्यतया एक पत्नी प्रथा का उल्लेख मिलता है परन्तु राजवंशों में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित थी। दशरथ, पाण्डु, अर्जुन, भीम, कृष्ण आदि के एक से अधिक पत्नियॉ थी। किन्तु सभी राजवंशी राजा अपनी पत्नियों का आदर सम्मान करते थे और सब समान अधिकारों को उपयोग करती थी।

वैदिक युग के समान महाकाव्य कालीन युग में भी पति के अभाव में स्त्री अपने देवर को पति रूप में स्वीकार कर सकती थी। पति द्वारा सन्तान न होने पर वह पति की अनुमति से किसी अन्य व्यक्ति से संतान प्राप्त कर सकती थी। कुन्ती और माद्री ने नियोग प्रथा द्वारा ही पुत्र प्राप्त किये थे। महाकाव्य काल में विधवा विवाह अथवा स्त्री के पुर्नविवाह का भी उल्लेख प्राप्त होता है। बालि की मृत्यु के बाद सुग्रीव ने उसकी विधवा तारा के साथ विवाह किया था।

महाकाव्य काल में स्त्रियॉं को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। कौशल्या, तारा, सीता, अत्रेयी, सुभद्रा, द्रौपदी सभी सुशिक्षित और प्रतिष्ठित व्यक्तित्व वाली थी। अतः हम स्वीकार कर सकते है कि महाकाव्य काल में स्त्रियॉं की स्थिति संतोषजनक थी।

1. **मौर्यकालीन समाज और स्त्री**

मौर्यकालीन समाज में स्त्री की स्थिति के अच्छे व बुरे दोनो पक्ष थे। मौर्यकालीन समाज में स्त्रियॉं को पुर्नविवाह का अधिकार था। स्त्री अपने दुराचारी पति से संबंध विच्छेद कर सकती थी। पारिवारिक सम्पति के द्वारा भाग पर उसका अधिकार माना जाता था। किन्तु मौर्यकाल में स्त्री को भोग विलास की वस्तु माना जाने लगा था। उन्हें आध्यात्मिक तथा दार्शनिक ज्ञान से दूर रखा जाने लगा था। उन्हें इस काल में उच्च शिक्षा प्रदान करना लगभग बंद कर दिया गया था। किन्तु मौर्यकाल में स्त्री की स्थिति अधिक दयनीय नहीं थी। वे अब भी पुरूषों के साथ धार्मिक व सामाजिक समारोह में भाग लेती थी। मौर्यकाल में वे बौद्ध भिक्षुणियों के रूप में स्वतन्त्र रह सकती थी। मौर्यकाल में स्त्री अंगरक्षिका और गुप्तचरों का काम भी करती थी। डॉ0 भंडारकर के अनुसार मौर्यकाल में पर्दाप्रथा प्रचलित थी।[5]

अशोक के अभिलेख से एक अन्य जानकारी यह मिलती है कि स्त्रियॉं अन्धविश्वास में अधिक विश्वास रखती थी। मौर्यकाल युग में वैश्यावृत्ति भी प्रचलित थी किन्तु समाज में उन वैश्याओं का अपना एक सम्मानजनक स्थान था। अतः यह माना जा सकता है कि मौर्यकाल के आते–आते स्त्री की स्थिति में परिवर्तन आने लगा था।

2. **उत्तर मौर्यकालीन युग और स्त्रीः–**

जिस मौर्यकाल में स्त्री की स्थिति श्रेष्ठ थी वहीं उत्तर मौर्यकाल में स्त्री की स्थिति हीन थी। मनुस्मृति के अनुसार पुरूष स्त्री का त्याग कर सकता है। किन्तु त्याग करने के बाद भी वह स्त्री उसकी भार्या बनी रहेगी। यदि किसी स्त्री का त्याग उसके पति ने कर दिया है तो भी उसे दूसरा विवाह करने का अधिकार नहीं था। किसी स्त्री को यह अधिकार नहीं था कि वह पुरूष का त्याग कर सके।

यदि स्त्री को कोई भी बीमारी है तो पुरूष अपनी पत्नी से अनुमति लेकर दूसरा विवाह कर सकता था।

मनू ने नियोग और विधवा विवाह का निषेध किया है। उत्तर मौर्यकाल में स्त्रियॉं की दशा अत्यन्त हीन होती चली गयी थी। इसका कारण यह माना जा सकता है कि बौद्ध भिक्षुणियों ने जो अपने पृथक संघ बनाये थे, उनमें अनाचार की मात्रा बहुत बढ़ गयी थी।

3. **संगमकालीन समाज–**

भारतीय इतिहास का वह काल जब दक्षिण भारत तीन राजवंशों चेरा, चोल एवं पाण्ड्य के शासकों द्वारा शासित होता है उसे ''संगम युग'' कहकर पुकारा जाता है। संगम युग में तमिल और आर्य संस्कृतियों का पूर्ण सम्मिश्रण हो चुका था।

इस समय में स्त्रियॉं की स्थिति सम्मान जनक थी। वे घर की आन्तरिक व्यवस्था में काफी स्वतंत्र थी। ऐसा माना जाता है कि वे खेती व व्यवसाय दोनो में पुरूषों का सहयोग करती थी। संगम युग में लड़कियों को शिक्षा दी जाती थी। संगम युग में लडकियों को संगीत व नृत्य की शिक्षा विशेषकर दी जाती थी। अवियार (Avaiyar) उस युग की विख्यात विदुषी महिला थी। वह एक श्रेष्ठ कवियित्री थी। संगम काल में स्त्री वैश्यावृति के माध्यम से भी जीवनयापन करती थी। ''परत्तियर और कणिगेचर'' उस समय की प्रसिद्ध नर्तकी व गणिकायें है।

4. **गुप्तकालीन समाज और स्त्री**

गुप्तकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग कहा जाता है। इस काल में स्त्रियॉं की स्थिति पिछले युगों की अपेक्षा कुछ गिरी हुई प्रतीत होती है। गुप्तकालीन युग में स्त्री की विवाह की आयु घटा दी गयी थी। उनके लिए शिक्षा के द्वार बंद हो गये थे। गुप्तकाल में पिता के लिए अनिवार्य था कि वह अपनी कन्याओं का विवाह उनके यौवन के पूर्व में ही कर दें। स्मृति ग्रन्थों में लिखा है कि जो पिता अपनी कन्या का विवाह उसके रजस्वला होने से पूर्व नहीं करता है, उसे नरक में जाना पड़ता है। यद्यपि उच्च कुल की स्त्री को शिक्षा का

अधिकार प्राप्त था। उस समय विधवा विवाह व सतीप्रथा दोनो का प्रचलन था।

उत्तर गुप्तकाल में ऐसा माना जाता है कि लड़कों की तरह लडकियों की भी शिक्षा का प्रबंध थां वे साहित्य, संगीत, कला आदि में प्रवीण होती थी। हर्ष की बहिन राज्य श्री सुशिक्षिता थी। राज्य श्री ने दिवाकर मित्र नामक बौद्ध पण्डित से धर्म की शिक्षा ली थी। समाज में स्त्रियोँ का बडा सम्मान था। किन्तु राजघराने की स्त्रियाँ पूर्णतया विलासिता और उपभोग की वस्तु समझी जाती थी।

चोलकालीन सभ्यता में स्त्रियोँ के सामाजिक जीवन और उनके क्रियाकलापों पर कोई प्रतिबंध न था तथापि सच्चरित्रता उनका भूषण माना जाता था। राजवंशी महिलायें राजाओं की नीतियों को प्रभावित करने की दक्षता भी रखती थी। चोलकालीन युग में राजाओं व सामन्तों के एक से अधिक पत्नियॉ थी किन्तु आमतौर पर एक पत्नी नियम ही था। चोल समाज में गणिकाओं का भी महत्व रहा है। वे प्रायः संगीत व नृत्य दोनो में पटु होती थी और धार्मिक उत्सवों में ही सार्वजनिक मंच पर आती थी।

प्रसिद्ध इतिहासकार स्मिथ ने लिखा है कि ''वे (राजपूत) हर्ष की मृत्यु के बाद से उत्तर भारत पर मुसलमानों के आधिपत्य तक इतने प्रभावशाली हो गये कि 7वीं शताब्दी के मध्य से 12वीं शताब्दी की समाप्ति तक के समय को ''राजपूत युग'' कहा जा सकता है।[6]

इस राजपूत युग में पुत्र की तुलना में पुत्री का स्थान निम्न माना जाता था। किन्तु उनके पालन–पोषण एवं शिक्षा की उपेक्षा नहीं की जाती थी। मण्डन मिश्र की पत्नी ने अपनी प्रखर बुद्धि से महान शंकराचार्य को भी चुप कर दिया था। लीलावती को गणित का गहरा ज्ञान था। इस काल में कश्मीर में रानी दिद्दाव काकतीय रानी रूद्रम्बा का शासन भी रहा था।

किन्तु इस काल में सतीप्रथा, जोहरप्रथा, कन्या वध, औरतों एवं लड़कियों का क्रय–विक्रय, डाकन प्रथा वैश्यावृति व दासप्रथा का आगमन हो चुका था।

मध्यकालीन भारत और स्त्री दशा

विश्व इतिहास में इस्लाम धर्म का अभ्युदय एक युगान्तकारी घटना है। इस धर्म के संस्थापक पैगम्बर मुहम्मद साहब (510–632 ई0) ने प्रचार व तलवार की ताकत से इसका विस्तार किया था। भारत में इस्लामी राज्य की स्थापना का श्रेय तुर्कों को है। भारत में प्रारम्भिक धावे करने वाले तुर्क गजनी राजवंश के थे।

वैदिक काल में महिलाओं को अत्यधिक सम्मान का स्थान प्राप्त था। वैदिक काल में स्त्री को सभी प्रकार के सामाजिक उत्सवों तथा यज्ञ आदि में सम्मिलित होने से पूर्व स्वतंत्रता थी।

उस युग की स्त्रियाँ इतनी विदुषी होती थी कि उनके मंत्र आज भी वैदिक संहिताओं में उपलब्ध होते है। लेकिन इस्लाम के आगमन से भारतीय समाज में अनेक परिवर्तन आ गये थे। मुसलमानों के मूल देश अरब और तुर्किस्तान में महिलाओं के लिये पर्दे में रहना अनिवार्य समझा जाता था। भारत में पर्दाप्रथा का प्रारम्भ हो गया था।

अकबर जैसे उदार बादशाह का आदेश था कि ''यदि कोई नौजवान स्त्री गलियों एवं बाजार में बगैर घूंघट के दिखाई दे या जान बूझकर उसने पर्दे को तोड़ा है तो उसे वैश्यालय में ले जाया जाय और उसी पेशे को अपनाने दिया जाये।''[7]

हिन्दुओं में पर्दे की प्रथा मुसलमानों के कारण आई है। मध्यकाल में परिवार में बेटी पैदा होना अशुभ समझा जाता था। टॉड के अनुसार राजपूत कहते थे कि ''बेटी जन्म का दिन मेरे लिऐ अभिशाप स्वरूप है।''[8]

मध्यकाल में जन्म के बाद 6 से 8 वर्षो से अधिक समय तक लड़कियों का अपने माता–पिता के घर रहना वर्जित माना जाता था।

16वीं सदी के बंगाली कवि मुंकुद राम के अनुसार जो पिता अपनी बेटी का 9 वर्ष में विवाह कर देता था, वह भाग्यवान तथा ईश्वर की कृपा पात्र समझा जाता था। इस समय एक पत्नी प्रथा का प्रचलन था। बहु–विवाह की सुविधा केवल धनी समुदाय (मुसलमानों, कुछ रजवाड़ों और अमीरों) को थी। तलाक व पुर्नविवाह मुसलमानों में आम बात थी लेकिन हिन्दु समाज में पुर्नविवाह वर्जित था। मध्यकाल में सतीप्रथा प्रचलित थी। वे विधवायें जो अपने पति के साथ सती नहीं होती थी समाज द्वारा उनका तिरस्कार होता था। विधवा स्त्री के बाल कटवा दिये जाते थे और उनको केवल रूखा–सूखा भोजन दिया जाता था। किन्तु एक माता के रूप में नारी का स्थान अत्यन्त सम्मान जनक था। राज्य की प्रथम महिला का स्थान माता या बादशाह की बहन को प्राप्त होता था। माता के सामने उपस्थित होने पर बादशाह ''कोर्निस'' ''सिजदा'' और ''तसलीम'' से अभिवादन किया करते थे।

एक हिन्दु महिला को अपने माता–पिता व अपने पति के माता–पिता की सम्पति पर कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। किन्तु नारियों के अलगाव एवं परतन्त्रता के बावजूद मध्यकाल में हुमायूँनामा की लेखिका गुलबदन बेगम और शिबिया तथा मुनिसाल अरवा की जीवनी की लेखिका जहाँनारा का स्थान तत्कालीन साहित्य में बहुत ऊँचा है।

मीराबाई, देवलरानी, रूपमती, सलीमा सुल्ताना, नूरजॅहा, सितिउन्निसा (जॅहानारा की अध्यापिका), अकाबाई, केनाबाई, मराठी महिला मुक्तिबाई, रजिया सुल्ताना, रानी दुर्गावती, चाँदबीवी जैसी अनेक क्षमतावान स्त्रियाँ मध्यकाल में प्रसिद्ध रही है।

गाँधीवादी संदर्भ

स्त्री अधिकार

महिलाओं के प्रति गांधीजी के सकारात्मक दृष्टिकोण का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे महिलाओं को पुरूषों के मुकाबले अधिक सुदृढ़ और सहृदय मानते थे। भारतीय समाज में अधिकतर इस तथ्य को माना जाता है कि नारी ''अबला'' है। गांधीजी नारी को अबला कहे जाने के सख्त खिलाफ है।

महात्मा गांधी के अनुसार

उन्हें अबला पुकारना महिलाओं की आंतरिक शक्ति को दुत्कारना है। यदि हम इतिहास पर नजर डाले तो हमें उनकी वीरता की कई मिसालें मिलेंगी। यदि

महिलायें देश की गरिमा बढ़ाने का संकल्प कर ले तो कुछ ही महीनों में वे अपनी आध्यात्मिक अनुभूति के बल पर देश का रूप बदल सकती है।

सामान्यतया महात्मा गांधीजी को धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक मामलों में हम परम्परावादी तथा अनुदार मानते है किन्तु जहां तक हिन्दू समाज में महिलाओं की स्थिति का प्रश्न है, गांधीजी ने जो दृष्टि 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में न केवल अपने भीतर विकसित की बल्कि उसे अपने आचरण में भी उतारा, वह 21वीं शताब्दी के चरण में भी काफी प्रांसगिक थी।

महात्मा गांधीजी नारी को पुरूष से किसी भी बात में कम नहीं आंकते थे। सहिष्णुता जैसे विषय में वे औरतों को पुरूषों से अधिक समर्थ और सक्षम मानते थे। यही कारण है कि उन्होंने कांग्रेस में महिलाओं को नेतृत्व का पूरा अवसर दिया था। विभिन्न आंदोलनों में औरतों को शरीक करने के साथ–साथ उनके सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक और राजनीतिक उत्थान के कार्यक्रम भी चलाये।

महात्मा जी की यह सर्वश्रेष्ठ बात है कि नारी मुक्ति का शोर मचाने की बजाय उन्होंने महिलाओं को एकदम सहज ढंग से स्वतंत्रता आंदोलन का अभिन्न अंग बनाया था।

हम यह निस्संकोच कह सकते है कि महिला अधिकारों के संबंध में आज जो अनुकूल वातावरण हमें दिखाई दे रहा है उसकी नींव गांधीजी सरीखे महानुभावों ने बहुत पहले रख दी थी।

प्रतिष्ठित सामाजिक कार्यकर्ता इला भट्ट ने ''गांधी आन वुमेन'' पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि ''महिलाओं ने अपने नेतृत्व में चले जन आंदोलन में सहज भाग लिया। इससे भारतीय महिलाओं के जीवन में हमेशा के लिए एक मोड़ आ गया। मैं कहना चाहूंगी कि यदि गांधीजी यह मोड़ न लाये होते तो मैं वह न होती जो मैं आज हूँ। यह बात आज की हर महिला पर लागू होती है।''

गांधीजी समूची मानवजाति का सम्मान करते थे, परन्तु महिलाओं के लिए उनके हृदय में अत्यन्त गहरी सहानुभूति और आदर का भाव मौजूद था। समूचे स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान उन्होंने अनेक महिलाओं को न केवल स्वतंत्रता आंदोलन में कूदने के लिए प्रेरित किया बल्कि उन्हें नेतृत्व करने का भी अवसर दिया।

स्वाधीनता संघर्ष के इतिहास में उल्लेखनीय व्यक्तित्वः–

1. सरोजिनी नायडू
2. सुचेता कृपालानी
3. सुशीला नैयर
4. विजय लक्ष्मी पंडित
5. अरूणा आसफ अली
6. इंदिरा गांधी
7. कस्तूरबा गांधी

इन सभी महिला नेताओं ने कांग्रेस को सशक्त बनाने में योगदान दिया। इसके अलावा बहुतसी महिलाओं ने महात्मा गांधी की प्रेरणा से सामाजिक उत्थान तथा अन्य रचनात्मक कार्यों को अपनाया। गांधीजी ने कुछ विदेशी महिलाओं को भी अपने स्नेह व व्यवहार से इतना प्रभावित किया था कि वे अपना देश छोड़कर न केवल भारत में बस गई बल्कि भारतीय बन गयी थी। उन सभी महिलाओं ने भारतीय नाम और भारतीय जीवन पद्धति अपना ली थी। इन सभी विदेशी महिलाओं ने रचनात्मक कार्यों में भी सक्रिय योगदान दिया। इन सब महिलाओं ने सरला बेन तथा मीरा बेन जैसे नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

महिलाओं में पुरूष की तुलना आंतरिक शक्ति अधिक होती है। इस आंतरिक शक्ति को गांधीजी सत्यागृह जैसे अहिंसक हथियार के लिए सर्वथा उपयुक्त मानते थे। गांधीजी ने महिला व्यक्तित्व को घर की चारदीवारी से बाहर निकालकर समाज एवं देश की सेवा करने का मौका दिया है।

महात्मा गांधीजी के अनुसारः– ''मैंने महिला सेवा को रचनात्मक कार्यक्रम में शामिल किया है क्योकि सत्याग्रह ने स्वतः ही महिलाओं को जिस तरह अंधेरे से बाहर निकाल दिया है वैसे इतने कम समय में और किसी भी उपाय से नहीं हो सकता है।''

आर्थिक स्वावलम्बनः–नया नजरिया

यद्यपि इस तथ्य से इंकार करना असंभव है कि भावनात्मक स्वर पर सम्मान और समानता के समर्थन भर से महिलाओं को समाज में वास्तविक बराबरी नहीं दिलायी जा सकती।

गांधीजी का स्पष्ट मत था कि औरतों का शैक्षणिक स्वर सुधारकर उन्हें आर्थिक रूप में आत्मनिर्भर बनाना बहुत जरूरी है। आजादी से पूर्व ही गांधीजी ने महिला समानता के लिए आर्थिक स्वावलम्बन व महिला शक्ति की आवश्यकता को पहचान लिया था।

खादी आंदोलन व महिला शक्तिः–गांधीजी इस बात से पूर्णतया परिचित थे कि महिलायें सामाजिक बंधनों के कारण घर से बाहर जाकर काम धन्धे नहीं कर पाती है, लगभग इसी समस्या को थोड़ा सा कमकरने अथवा समाप्त करने के लिए उन्होंने खादी आंदोलन को प्रारम्भ किया था। खादी आंदोलन का एक उद्देश्य स्वदेशी की भावना को उजाकर करना और दूसरा उद्देश्य देश की गरीब जनता विशेषकर महिलाओं को घर पर ही चरखा या तकली चलाकर कुछ धन अर्जित करने का साधन उपलब्ध कराना था।

गांधीजी का दृष्टिकोण एकदम स्पष्ट था कि उनकी नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और स्वावलम्बी हो। खादी उद्योग के माध्यम से गांवों, कस्बों व शहरों की लाखों निर्धन महिलाओं को देशभक्ति की अनुभूति के साथ–साथ रोजगार भी मिला और उनके जीवन में खुशहाली भी आई है।

सामाजिक संरचना, नारी की समस्यायें और गांधी

मध्यकाल में भारतीय नारी के जीवन में कुप्रथाओं जैसे पर्दाप्रथा, सतीप्रथा, बहुपत्नीप्रथा का आगमन हो गया था। टॉड के अनुसार राजपूत इस बात को स्वीकार करते थे। ''बेटी का जन्म का दिन मेरे लिए अभिशाप स्वरूप है।''

महात्मा गांधी स्त्रियों के सामाजिक उत्थान के लिए अत्यधिक चिंतित थे। उनका मानना था कि बाल विवाह, पर्दाप्रथा, सतीप्रथा और विधवा विवाह निषेध जैसी कुरीतियों के कारण ही महिलायें उन्नति नहीं कर पाती है

और समाज की आधी आबादी अर्थात् महिलायें शोषण अन्याय तथा अत्याचार झेलने को विवश होती है।

समाज में स्त्रियाँ की स्थिति और भूमिका

''आदमी जितनी बुराइयों के लिए जिम्मेदार हैं उनमें सबसे ज्यादा घटिया वीभत्स और पाशविक बुराई उसके द्वारा मानवता के अर्धांग अर्थात् नारी जाति का दुरूपयोग है। वह अबला नहीं, नारी है। नारी जाति निश्चित रूप से पुरूष जाति की अपेक्षा अधिक उदात है, आज भी नारी त्याग, मूक दुख–सहन, विनम्रता आस्था और ज्ञान की प्रतिभूति है।''[9]

''स्त्री को चाहिये कि वह स्वयं को पुरूष के भोग की वस्तु मानना बंद कर दे। इसका ईलाज पुरूष की अपेक्षा स्वयं स्त्री के हाथों में ज्यादा है। उसे पुरूष की खातिर, जिसमें पति भी शामिल है सजने से इंकार कर देना चाहिए। तभा वह पुरूष के साथ बराबर की साझीदार बन सकती है। मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता कि सीता ने राम को अपने रूप–सौन्दर्य से रिझाने पर एक क्षण भी नष्ट किया होगा।''

''यदि मैंने स्त्री के रूप में जन्म लिया होता तो मैं पुरूष के इस दावें के विरूद्ध विद्रोह कर देता कि स्त्री उसके मन बहलाव के लिए ही पैदा हुयी है। स्त्री के हृदय में स्थान पाने के लिए मुझे मानसिक रूप से स्त्री बन जाना पड़ा है। मैं तब तक अपनी पत्नी के हृदय में स्थान नहीं पा सका जब तक कि मैंने उसके प्रति अपने पहले के व्यवहार को बिलकुल बदल डालने का निश्चय नहीं कर लिया। इसके लिए मैंने उसके पति की हैसियत से प्राप्त सभी तथाकथित अधिकारों को छोड़ दिया और ये अधिकार उसी को लौटा दिये। वह न कोई आभूषण धारण करती है न अंलकार। मैं चाहता हूँ कि आप भी उसी की तरह हो जाओ। अपनी मौज मस्तियों की गुलामी और पुरूष की गुलामी छोड़ों। अपना श्रृंगार करना छोड़ो, इत्र और लवैंडरों का त्याग कर दो, सच्ची सुगंध वह है जो तुम्हारे हृदय से आती है, यह पुरूष को ही नहीं अपितु पूरी मानवता को मोहित करने वाली है। यह तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। पुरूष स्त्री से उत्पन्न होता है उसकी मांस–मज्जा से बना है। अपनी प्रविष्ठा पुनः प्राप्त करो और अपने संदेश फिर सुनाओं।[10]''

''नारी को अबला कहना उसकी निंदा करना है। यह पुरूष का नारी के प्रति अन्याय है। यदि शक्ति का अर्थ पाशाविक शक्ति है तो सचमुच पुरूष की तुलना में स्त्री निश्चित रूप से पुरूष की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ है। क्या उसमें पुरूष की अपेक्षा अधिक अंत प्रज्ञा अधिक आत्मव्याग, अधिक सहिष्णुता और अधिक साहस नहीं है? उसके बिना पुरूष का कोई अस्तित्व नहीं है। यदि अंहिसा मानव जाति का नियम है तो भविष्य नारी जाति के हाथ में है। हृदय को आकर्षित करने का गुण स्त्री से ज्यादा और किसमें हो सकता है ?[11]

यदि पुरूष ने अपने अविवेकपूर्ण स्वार्थ के वशीभूत होकर स्त्री की आत्मा को इस तरह कुचला न होता और स्त्री ''आनन्दोप भोग'' का शिकार न बन गयी होती तो उसने संसार को अपनी अंतर्हित अनंत शक्ति का परिचय दे दिया होता। जब स्त्री को पुरूष के बराबर अवसर प्राप्त हो जायेगे और वह परस्पर सहयोग और संबंध की शक्तियों का पूरा–पूरा विकास कर लेगी तो संसार स्त्री शक्ति का उसकी सम्पूर्ण विलक्षणता और गौरव के साथ परिचय पा सकेगा।[12]

''मेरा मानना है कि स्त्री आत्मत्याग की मूर्ति है लेकिन दुर्भाग्य से आज वह यह नहीं समझ पा रही है कि वह पुरूष से कितनी श्रेष्ठ है। जैसा कि टाल्सटॉय ने कहा है ''वे पुरूष के सम्मोहक प्रभाव से आंक्रांत है। यदि वे अंहिसा की शक्ति पहचान ले तो वे अपने को अबला कहे जाने के लिए हरगिज राजी नहीं होगी।''[13]

स्थानः– पुरूष व महिला आपसी संबंध

स्त्री प्राचीन काल से पुरूष की सहचरी है, उसकी मानसिक क्षमताऐं पुरूष के बराबर है। सामाजिक प्राणी होने के नाते एक स्त्री को पुरूष के छोटे से छोटे कार्यकलाप में भाग लेने का अधिकार है और वर्तमान में जितनी स्वाधीनता और आजादी का हकदार पुरूष है उतनी ही हकदार स्त्री भी है।

स्त्री को कार्यकलाप, कार्यक्षेत्र व कार्यशैली में सर्वोच्च स्थान पाने का वैसा ही हक है जैसा कि पुरूष को अपने क्षेत्र में है। सर्वोत्तम स्थिति तो यही है। प्राचीन काल, मध्यकाल और आधुनिक भारत में चली आ रही गलत परम्पराओं के कारण ही मूर्ख और निकम्मे लोग भी स्त्री के ऊपर श्रेष्ठ बनकर मजे लूट रहे है, जबकि वे इस योग्य हैं नहीं और उन्हें यह बेहतर स्थान मिलना भी चाहिए। इन पुरानी परम्पराओं के कारण ही आज की स्त्री कई आंदोलनों से जुड नहीं पाती है।

सामाजिक गतिरोध – (स्त्री शक्ति व पुरूष शक्ति)

प्राचीन भारत के इतिहास में स्त्री एक सर्वोच्च पद की अधिकारी है जो वेदों की ज्ञाता, मंत्रों की ज्ञाता और सर्वश्रेष्ठ कवियित्री है। मध्यकाल में समय परिवर्तित होता है और पर्दाप्रथा, सतीप्रथा, विधवा विवाह निषेध और बहुपत्नि प्रथा समाज में आ गयी।

भारत की आजादी में नारी का योगदान महत्वपूर्ण रहा। सरोजनी, सुचेता कृपलानी, सुशीला नैयर, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि कई ऐसे नाम है जो हमारी इस आजादी की लड़ाई में सूत्रधार रही है।

किन्तु स्त्री ने अनजाने में अनेक विचरण उपायों से पुरूष को विविध प्रकार से फंसाया हुआ है और इसी प्रकार पुरूष ने भी स्त्री को अपने ऊपर वर्चस्व प्राप्त न करने देने के लिए अनजाने में उतना ही किन्तु व्यर्थ संघर्ष किया है।

इस वर्चस्व के संघर्ष के कारण एक गतिरोध की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। इस गतिरोध को देखे तो यह एक गम्भीर समस्या है जिसका समाधान भारत की बेटियॉ ही कर सकती है। भारतीय स्त्री को पश्चिम के तरीकों का अनुकरण नहीं करना है। क्योकि भारतीय वातावरण और परिवेश पश्चिमी वातावरण और परिवेश्य से एकदम विपरीत है। भारतीय की प्रकृति और यहां के वातावरण को देखकर अपने तरीके लागू करने होगें। उनके हाथ मजबूत, नियन्त्रणशील, शुचिकारी और संतुलित होने चाहिए जो हमारी संस्कृति के उत्तम तत्वों को तो बचा रखे और जो कुछ निकृष्ट तथा अपकर्षणकारी है उसे वेहिचक निकाल फेंके।

गांधीजी के अनुसार ''पुरूष ने स्त्री को अपनी कठपूतली समझ लिया है। स्त्री को भी इसका अभ्यास हो गया है और अंततः उसे यह भूमिका सरल और मजेदार लगने लगी है क्योकि जब पवन के गर्त में गिरने वाला व्यक्ति किसी दूसरे को भी अपने साथ खपच लेता है तो गिरने की क्रिया सरल लगने लगती है''(14)

मेरा दृढ़ मत है कि इस देश की सही शिक्षा यह होगी कि स्त्री को अपने पति से भी ''न कहने की कला सिखाई जाये और उसे यह बताया जाये कि अपने पति की कठपुतली या उसके हाथों में गुड़िया बनकर रहना उसके कर्तव्य का अंग नहीं है। उसके अपने अधिकार और कर्तव्य है।(15)

स्त्री शिक्षा और गांधी

''एक आदमी को पढ़ाओगें तो एक व्यक्ति शिक्षित होगा। एक स्त्री को पढ़ाओगें तो पूरा परिवार शिक्षित होगा''

महात्मा गांधी शिक्षा के माध्यम से महिलाओं को मुक्ति में विश्वास रखते थे। महात्मा गांधी ने भारतीय समाज के कायाकल्प की दिशा में चलायी गयी राजनीतिक, सामाजिक अथवा विकास संबंधी गतिविधियों में महिलाओं के प्रति कोई भेदभाव नहीं रखा था। सामाजिक निरंकुशता और पुरूष प्रधानता की वजह से महिलाओं की जो दुर्दशा हुई, उसका गांधीजी को भलीभांति ज्ञान था।

गांधीजी ने महिलाओं की शिक्षा को पर्याप्त महत्व दिया किन्तु वे जानते थे कि अकेली शिक्षा से ही राष्ट्र निर्धारित लक्ष्य प्राप्त नहीं किये जा सकते है। शिक्षा गांधीजी के ग्राम पुर्ननिर्माण तथा उसके माध्यम से राष्ट्र पुर्ननिर्माण का मात्र एक हिस्सा एक प्रमुख घटना थी।

गांधीजी इस तथ्य को भी स्वीकार करते थे कि महिलाओं के पिछड़ेपन के लिए मात्र शिक्षा जिम्मेदार नहीं है अपितु हमारी समूची शिक्षा प्रणाली विगलित है। महात्मा गांधीजी शहरों व कस्बें में रहने वाली समस्त जनता की आलोचना करते थे क्योकि यह नगरीय जनसंख्या प्रत्येक चीज में लिंग संबंधी भेदभाव को बढ़ावा देती है।

महात्मा गांधीजी के अनुसार ''जरूरी यह है कि शिक्षा प्रणाली को दुरूस्त किया जाये और उसे व्यापक जनसमुदाय को ध्यान में रखकर तय किया जाये। उनके अनुसार शिक्षा प्रणाली में बच्चों के साथ प्रौढ़शिक्षा पर ही बल दिया जा सके।''

महात्मा गांधीजी के अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो लड़के–लड़कियों को स्वयं के प्रति अधिक उत्तरदायी बना सके और एक दूसरे के प्रति अधिक सम्मान की भावना पैदा कर सके। उनका मानना था कि महिलाओं के लिए कोई कारण नहीं है कि वे अपने को पुरूष का गुलाम अथवा पुरूषों से घटिया समझे महिला और पुरूषों दोनों की सत्ता एक ही है। अतः महिलाओं को गांधीजी यह सलाह देते है कि वे सभी अवांछित और अनुचित दबावों के खिलाफ विद्रोह करे। यदि वे इस तरह का विद्रोह करती है तो कोई क्षति नहीं होगी बल्कि इससे तर्कसंगत प्रतिरोध होगा और पवित्रता आयेगी।

य़द्यपि भारतीय परम्परा में आमतौर पर महिलाओं को सम्मान मिला है और भारत एक मात्र ऐसा देश है जहां करोड़ों लोग अर्धनारीश्वर की पूजा करते है। भारत ही एक ऐसा देश है जहां मनु ने यह घोषणा की कि जहां नारी का सम्मान होता है वहां देवता प्रसन्न रहते है। यह एक बड़ा सत्य है कि भारतीय महिलायें आज भी कुल मिलाकर निरक्षर और अशिक्षित है तथा वांछित रूप से अपनी आवाज संसद या विधान मण्डलों में उठाने में असमर्थ है।

"Great Women of India" की भूमिका में महान चिंतक और राजनेता भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ0 एस0 राधाकृष्णन ने कहा है कि ''यह तथ्य अधिक महत्वपूर्ण है कि हम मनुष्य है न कि वे भौतिक विशेषताये जो हमें एक दूसरे से अलग करती है।''

हम सब इस तथ्य से पूर्णतया सहमत है कि भारतीय नारी की क्षमता और कार्यदक्षता किसी भी उन्नतिशील देश की नारी से कम नहीं है। अन्तर केवल इतना ही है कि जहां उन्नतिशील देशों में नारियों को पुरूषों के समान लगभग प्रत्येक क्षेत्र में समान अवसर प्राप्त हैं, वहीं भारतीय नारियों के सामने व्यावहारिक रूप में अवसरों की कमी है। संविधान में यद्यपि सिद्धांत रूप में स्त्री और पुरूष को समान अवसर प्राप्त है परन्तु व्यावहारिक रूप में ऐसा नहीं है। सामाजिक स्तर पर कई प्रकार की पुरातन परम्परायें, रूढ़ियाँ और कुप्रथायें महिलाओं के विकास में बाधक है। अतः महात्मा गांधी के ''स्वराज्य'' को वास्तविक धरातल पर लाने ले जाने के लिए यह आवश्यक है कि महिलाओं को पुरूष के समान सभी अधिकार व्यवहार में प्रदान किये जाये।

यद्यपि हमें अपनी संस्कृति और सभ्यता का मुख्यतया ध्यान रखना है। महिलाओं की शिक्षा में हमें उनकी व्यावहारिक कठिनाईयों पर ध्यान देना होगा जो शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर आती है। सभी महिलाओं की शिक्षा व पाठ्यक्रम आदि के निर्धारण में नारी जाति की स्वाभाविक आवश्यकताओं का ध्यान रखना होगा। पुरूष व स्त्री के लिए एक ही प्रकार के पाठ्यक्रम के निर्धारण से उनका विकास नहीं हो सकता। शिक्षा के क्षेत्र में एक परिवर्तन तो अत्यधिक आवश्यक और सम्भवतया किया जाना चाहिए कि प्राथमिक स्तर तक सह शिक्षा प्रदान की जावे।

अगस्त 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात परिवर्तन हो रहे है तथा भारतीय नारी अपने परम्परागत स्वाभाविक विशेषता से मुक्त होने लगी है। स्वतन्त्र भारत में महिलायें आज अधिकाधिक संख्या में वैतनिक एवं लाभपूर्ण व्यवसायों और काम धन्धों में आने लगी है। भारत देश ने समाज के निम्न वर्ग की औरते हमेशा से ही मजदूरी करती रही है किन्तु उच्च वर्ग की महिलायें भी घर की चारदीवारी तक ही सीमित थी। स्वतन्त्र भारत में महिलायें घर की चारदीवारी से निकलकर उन धन्धों में जा रही है जहां अब तक मात्र पुरूषों का आधिपत्य था। यह एक अत्यन्त अपूर्व घटना है और स्वतन्त्र भारत की विशेषता भी।

महात्मा गांधी और नारी उत्थान

भारतीय जीवन शैली, भारतीय संस्कृति, भारतीय परम्परा व राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आंदोलन में राष्ट्रपिता मोहनदास करमचन्द गांधी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

भारतीय समाज की परिकल्पना वह राम–राज्य के आधार पर करते है। वह एक ऐसे समाज के निर्माण का स्वप्न देखा करते थे जिसमें न्याय समानता व शान्ति भारतीय समाज की प्रमुख धरोहर हो।

गांधीजी के अनुसार भारत में न्याय, समानता, व शान्ति तब तक स्थापित नहीं हो सकती जब तक स्त्रियोँ को भी अपने अधिकार और कर्तव्यों का ज्ञान न हो।

गांधी पुत्र और पुत्री के साथ एक समान व्यवहार करने में विश्वास करते थे। महिलाओं से संबंधित मुद्दों को उठाने वाले महात्मा गांधी पहले व्यक्ति नहीं थे। उनसे पहले अनेक समाज–सुधारकों का रवैया सहानुभूतिपूर्ण होने के साथ–साथ संरक्षणात्मक था।

भारतीय राजनीति में गांधी के पर्दापण के साथ महिलाओं के विषय में एक नये नजरिये की शुरूआत हुई थी। भारतीय नारी के संबंध में गांधी की समन्वित सोच व सम्मानपूर्ण भाव का आधार उनकी माँ और बहन रहीं है।

बारबर साउथबर्ड के अनुसार ''गांधी की नारीवादी सोच में दो तत्वों की सर्वाधिक भूमिका है।'' पहला ''हर स्तर पर ताकि हर मायने में स्त्री–पुरूष समानता तथा दोनो के विशिष्ट लौंगिक भिन्नता के मद्देनजर उनके सामाजिक दायित्वों में भिन्नता''

''गांधी महिलाओं को एक ऐसी नैतिक शक्ति के रूप में देखना चाहते थे जिनके पास अपार नारीवादी साहस हो।''

गांधी के अनुसार स्त्री और पुरूष दोनो समान है दोनो की भावनायें भी समान है। समस्त धर्मग्रन्थों में स्त्रियोँ की स्वतन्त्रता से संबंधित बातों का गांधी विरोध करते थे। उनके अनुसार सभी धर्मग्रन्थों में कही गई बातें देवताओं की नहीं है। हमें यह अवश्य याद रखना है कि वे सारे धार्मिक ग्रन्थ भी एक पुरूष द्वारा लिखे गये है।

धर्मग्रन्थों पर टिप्पणी करते हुए गांधी ने कहा है कि स्मृतियों में लिखी सारी चीजे दैव वाणी नहीं है तथा उनमें भटकाव व त्रुटियों का होना सहज सम्भाव्य है।

गांधीजी के अनुसार पुरूषों ने स्त्री को अपनी कठपूतली के रूप में इस्तेमाल किया है। निस्संदेह इसके लिए पुरूष ही जिम्मेदार है। लेकिन अंततः महिलाओं को यह स्वयं निर्धारित करना होगा कि वह किस प्रकार रहना चाहती है उनका मानना है कि यदि महिलाओं को विश्व में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है तो उन्हें पुरूषों को आकर्षित एवं खुश करने के लिए सजना–संवरना बंद कर देना चाहिए और आभूषणों से दूर रहना चाहिए।

भारतीय समाज में एक धारणा यह व्याप्त है कि पुरूष स्त्रियोँ से हमेशा सर्वश्रेष्ठ होते है। यह स्त्रियोँ की दयनीय स्थिति है कि उन्हें अपने से कम बौद्धिक क्षमता वाले पुरूष के साथ रहना पड़ता है। महिला पुरूष की साथी है जिसे ईश्वर ने एक समान मानसिक वृत्ति दी है। उसे भी पुरूष के समान हर कार्य में हिस्सा लेने का अधिकार है फिर भी समाज में मौजूद रीति–रिवाजों के कारणों से एक अज्ञानी और अयोग्य पुरूष भी महिलाओं पर अपना प्रभुत्व बनाये रखता है। समाज का प्रत्येक पुरूष स्त्री पर अपना पूर्ण अधिकार रखता है। गांधीजी इस विचारधारा का विरोध करते है।

''यह हमारी सामाजिक व्यवस्था की सहज अवस्था ही होनी चाहिए। महज एक दूषित रूढ़ि और रिवाज के कारण बिल्कुल ही मूर्ख और नालायक पुरूष भी स्त्रियोँ से बडे माने जाते है। यद्यपि वे इस बड़प्पन के पात्र नहीं होते है न ही उन्हें मिलना चाहिऐ।''

जॉन स्टुअर्ट मिल और गांधी के विचारों में काफी समानता मिलती है, मिल के अनुसार ''जब मानसिक तौर पर श्रेष्ठतर व्यक्ति अपने से कमतर व्यक्ति को अपने एकमात्र अंतरंग साथी के रूप में चुनता है तो इस संबंध के दुष्प्रभावों से भी वह अछूता नहीं रह सकता है।''

भारतीय समाज में जब एक नारी पुरूष से कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है, आज भी पुत्रियों से ज्यादा पुत्रों को महत्व दिया जाता है। आज भी कन्या शिशु की जानकारी मिलते ही उसकी गर्भ में ही हत्या कर दी जाती है। यह सामाजिक विषमता महात्मा गांधी को बहुत कष्ट पहुंचाती थी।

गांधीजी के अनुसार ''पारिवारिक संपत्ति में बेटा और बेटी दोनो का एक समान हक होना चाहिए। उसी प्रकार पति की आमदनी को पति और पत्नी की सामूहिक संपत्ति समझा जाना चाहिए क्योकि इस आमदनी के अर्जन में स्त्री का भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से योगदान रहता है।

भारतीय समाज में विवाह के समय लड़कियों का दान अर्थात् कन्यादान किया जाता है। गांधीजी ने इस विचारधारा की काफी आलोचना की है। उनके अनुसार एक बेटी को किसी की भी संपत्ति समझा जाना सही नहीं है।

गांधीजी ने मेरे सपनों का भारत में लिखा है कि ''दम्पति के बाहरी कार्यों के लिए पुरूष सर्वोपरि है। बाहरी कार्यों का विशेष ज्ञान उसके लिए जरूरी है। भीतरी कामों में स्त्री की प्रधानता है। इसलिए गृह व्यवस्था, बच्चों की देख–भाल, उनकी शिक्षा आदि के बारे में स्त्री को विशेष ज्ञान होना चाहिए।''

महात्मा गांधीजी दहेज प्रथा के खिलाफ थे। दहेज प्रथा एक ऐसी सामाजिक बुराई है जिसने भारतीय महिलाओं के जीवन को कष्टमयी बना दिया है। गांधीजी इस दहेज व्यवस्था को ''खरीदी बिक्री'' का कारोबार मानते थे। उनके अनुसार ''कोई भी युवक, जो दहेज को विवाह की शर्त रखता है, वह अपनी शिक्षा को कलंकित करता है, अपने देश को कलंकित करता है और नारी जाति का अपमान करता है।''

गांधीजी ने अपने वक्तत्य में यह भी स्वीकार किया है कि यदि मेरे पास मेरी देख–रेख में कोई लड़की होती तो मैं उसे जीवन भर कुंआरी रखना पसंद करता, बजाय इसके कि उसे ऐसे व्यक्ति को सौंपता जो उसे अपनी पत्नी बनाने के एवज में दहेज पाये जाने की अपेक्षा रखता।

बाल विवाह

बाल विवाह भारतीय समाज की ऐसी कूप्रथा है जिसने लड़कियों का बचपन छीन लिया है। जिस आयु में लड़कियों को विवाह का अर्थ भी नहीं पता होता उस आयु में वह विवाह के परिणय बंधन में बंध जाती है।

महात्मा गांधीजी ने कहा था कि ''यदि मेरे पास सत्ता होती अथवा मेरी कलम में पर्याप्त शक्ति है तो मैं उसका उपयोग प्रत्येक बाल विवाह को रोकने के लिए करता। अल्प आयु में अपने बच्चों का विवाह करने वाले माता–पिता वास्तव में उनके शत्रु है और वे उन्हें कमजोर और निर्भर बना देने के लिए उत्तरदायी है''।

शारदा अधिनियम में शादी की आयु 14 वर्ष तक बढ़ाने का प्रस्ताव रखा गया उसी समय गांधीजी को महसूस हुआ कि यह 16 या 18 वर्ष तक बढ़ा देनी चाहिए।

गांधीजी का यह आग्रह था कि ''अगर बेटी बाल विधवा हो जाये तो दूसरी शादी करवा देनी चाहिए। जब कोई स्त्री पुर्नविवाह करना चाहती थी तो उसे जाति से बाहर कर दिया जाता था। किन्तु महात्मा गांधीजी पुर्नविवाह के पक्षधर थे। वे सभी समुदायों को संबोधित करते हुए कहा था कि यदि कोई बाल विधवा पुर्नविवाह की इच्छुक हो तो उसे जातिच्युत या बहिष्कृत ना करे।

गांधीजी केवल सतीप्रथा अथवा बाल विवाह के ही विरोधी नहीं थे अपितु उन समस्त कुरीतियों और रूढ़ियों के विरूद्ध थे, जो स्त्रियों के नैतिक और आध्यात्मिक विकास के मार्ग में बाधक हो।

निष्कर्ष

पूर्व पाषाण काल में जब मात्र मनुष्य था उस समय स्त्री व पुरूष नाम की कोई परिभाषा नहीं थी। मध्य पाषाण काल तक आते–आते मनुष्य मछलियों व कन्द फूल के सहारे जीवन यापन कर रहा था। नव पाषाण काल में श्रम की आवश्यकता का जन्म हो गया था। इस काल मातृसतात्मक परिवार प्रथा का प्रचलन था। अतः माता या स्त्री का स्थान सर्वोपरि था।

वैदिक काल में घोषा, अपाला, लोपमुद्रा और श्रद्धा ने ऋचाओं की रचना की थी। उत्तर वैदिक काल में भी स्त्री पुरूष की ''अर्धांगिनी'' थी किन्तु इस काल में स्त्री को खरीदा व बेचा जाने लगा था। महाकाव्य काल में स्त्री को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। कौशल्या, तारा, सीता, उर्मिला सभी सुशिक्षित थी। मौर्यकाल के आते ही पर्दाप्रथा का प्रचलन होने लगा था। उत्तर मौर्यकाल में पुरूष को स्त्री का त्याग करने का अधिकार मिल गया था। इस्लाम धर्म (मध्यकाल) का अभ्युदय होते ही भारतीय समाज में पर्दाप्रथा, बाल विवाह, बहुपत्नी प्रथा, दहेजप्रथा, सतीप्रथा जैसी कुप्रथाओं का प्रसार हो चुका था।

किन्तु 1857 की क्रांति के समय में भारतीय नारी ने जो अद्भूत साहस का परिचय दिया वह अवर्णनीय है। महात्मा गांधीजी ने स्वयं स्वीकार किया कि मेरा चरखा भारतीय स्त्री के हाथों में ही सुरक्षित रहा है। महात्मा गांधी ने उस भारतीय नारी को एक नयी परिभाषा दी।

अंत टिप्पणी

1. *भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1200 ई0) लेखक शर्मा एवं व्यास, पृष्ठ संख्या–33*
2. *भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1200 ई0) लेखक शर्मा एवं व्यास, पृष्ठ संख्या–57*
3. *भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1200 ई0) लेखक शर्मा एवं व्यास, पृष्ठ संख्या–91*
4. *भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1200 ई0) लेखक शर्मा एवं व्यास, पृष्ठ संख्या–96*
5. *भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1200 ई0) लेखक शर्मा एवं व्यास, पृष्ठ संख्या–255*
6. *भारत का इतिहास (प्रारम्भ से 1200 ई0) लेखक शर्मा एवं व्यास, पृष्ठ संख्या–515*
7. *मध्यकालीन भारत का इतिहास (1200–1761 ई.) लेखक डॉ0 कालूराम शर्मा एवं डॉ0 प्रकाश व्यास पृष्ठ संख्या–463*
8. *मध्यकालीन भारत का इतिहास (1200–1761 ई.) लेखक डॉ0 कालूराम शर्मा एवं डॉ0 प्रकाश व्यास पृष्ठ संख्या–463*
9. *यंग, 15–9–1921 पृष्ठ संख्या–292*
10. *यंग, 8–12–1927 पृष्ठ संख्या–406*
11. *यंग, 10–4–1930 पृष्ठ संख्या–121*
12. *यंग, 7–5–1931 पृष्ठ संख्या–96*
13. *यंग, 14–1–1932 पृष्ठ संख्या–19*
14. *हरि, 25–1–1936 पृष्ठ संख्या–396*
15. *हरि, 2–5–1936 पृष्ठ संख्या–93*